



e-ISSN: 2319-8753 | p-ISSN: 2347-6710

IJIRSET

International Journal of Innovative Research in
SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIVE RESEARCH

IN SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

Volume 12, Issue 9, September 2023

ISSN INTERNATIONAL
STANDARD
SERIAL
NUMBER
INDIA

Impact Factor: 8.423

9940 572 462

6381 907 438

ijirset@gmail.com

www.ijirset.com

अष्टाध्यायी के सूत्रों का औचित्य एवं महत्व

¹बरखा तोमर, ²डॉ. शशि तिवारी

¹शोधकर्त्री, आगरा कॉलेज, आगरा, उत्तर प्रदेश

²रीडर एवं विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग, आगरा कॉलेज, आगरा (उत्तर प्रदेश)

सार

अष्टाध्यायी (अष्टाध्यायी = आठ अध्यायों वाली) महर्षि पाणिनि द्वारा रचित संस्कृत व्याकरण का एक अत्यंत प्राचीन ग्रंथ (8वीं ई.पू.) है।^[1] इसमें आठ अध्याय हैं; प्रत्येक अध्याय में चार पद हैं; प्रत्येक पद में 38 से 220 तक सूत्र हैं। इस प्रकार अष्टाध्यायी में आठ अध्याय, बत्तीस पद और सब मिलाकर लगभग 4000 सूत्र हैं। अष्टाध्यायी पर महामुनि कात्यायन का विस्तृत वार्तिक ग्रन्थ है और सूत्र तथा वार्तिकों पर भगवान पतंजलि का विशद विवरणात्मक ग्रन्थ महाभाष्य है। संक्षेप में सूत्र, वार्तिक एवं महाभाष्य तीनों सम्मिलित रूप में 'पाणिनीय व्याकरण' कहलाता है और सूत्रकार पाणिनी, वार्तिककार कात्यायन एवं भाष्यकार पतंजलि - तीनों व्याकरण के 'त्रिमुनि' कहलाते हैं।

अष्टाध्यायी छह वेदांगों में मुख्य माना जाता है। अष्टाध्यायी में 3155 सूत्र और आरंभ में वर्णसमाम्नाय के 14 प्रत्याहार सूत्र हैं। अष्टाध्यायी का परिमाण एक सहस्र अनुष्टुप श्लोक के बराबर है। महाभाष्य में अष्टाध्यायी को "सर्वविद-परिषद्-शास्त्र" कहा गया है। अर्थात् अष्टाध्यायी का संबंध किसी वेदविशेष तक सीमित न होकर सभी वैदिक संहिताओं से था और सभी के प्रातिशरूय अभिमतों का पाणिनि ने समादर किया था। अष्टाध्यायी में अनेक पूर्वाचार्यों के मतों और सूत्रों का संनिवेश किया गया। उनमें से शाकटायन, शाकल्य, अभिशाली, गार्ग्य, गालव, भारद्वाज, कश्यप, शौनक, स्फोटायन, चाक्रवर्मण का उल्लेख पाणिनि ने किया है।

परिचय

अष्टाध्यायी का समय

अष्टाध्यायी के कर्ता पाणिनि कब हुए, इस विषय में कई मत हैं। भंडारकर और गोल्डस्टकर इनका समय 7वीं शताब्दी ई.पू. मानते हैं। मैकडानेल, कीथ आदि कितने ही विद्वानों ने इन्हें चौथी शताब्दी ई.पू. माना है। भारतीय अनुश्रुति के अनुसार पाणिनि नंदों के समकालीन थे और यह समय 5वीं शताब्दी ई.पू. होना चाहिए। पाणिनि में शतमान, विंशतिक और कार्षापण आदि जिन मुद्राओं का एक साथ उल्लेख है उनके आधार पर एवं अन्य कई कारणों से हमें पाणिनि का काल यही समीचीन जान पड़ता है।^[1,2,3]

संरचना

अष्टाध्यायी में आठ अध्याय हैं और प्रत्येक अध्याय में चार पद हैं। पहले दूसरे अध्यायों में संज्ञा और परिभाषा संबंधी सूत्र हैं एवं वाक्य में आए हुए क्रिया और संज्ञा शब्दों के पारस्परिक संबंध के नियामक प्रकरण भी हैं, जैसे क्रिया के लिए आत्मनेपद-परस्मैपद-प्रकरण, एवं संज्ञाओं के लिए विभक्ति, समास आदि। तीसरे, चौथे और पाँचवें अध्यायों में सब प्रकार के प्रत्ययों का विधान है। तीसरे अध्याय में धातुओं में प्रत्यय लगाकर कृदंत शब्दों का निर्वचन है और चौथे तथा पाँचवें अध्यायों में संज्ञा शब्दों में प्रत्यय जोड़कर बने नए संज्ञा शब्दों का विस्तृत निर्वचन बताया गया है। ये प्रत्यय जिन अर्थविषयों को प्रकट करते हैं उन्हें व्याकरण की परिभाषा में वृत्ति कहते हैं, जैसे वर्षा में होनेवाले इंद्रधनु को वार्षिक इंद्रधनु कहेंगे। वर्षा में होनेवाले इस विशेष अर्थ को प्रकट करनेवाला "इक" प्रत्यय तद्धित प्रत्यय है। तद्धित प्रकरण में 1,190 सूत्र हैं और कृदंत प्रकरण में 631। इस प्रकार कृदंत, तद्धित प्रत्ययों के विधान के लिए अष्टाध्यायी के 1,821 अर्थात् आधे से कुछ ही कम सूत्र विनियुक्त हुए हैं। छठे, सातवें और आठवें अध्यायों में उन परिवर्तनों का उल्लेख है जो शब्द के अक्षरों में होते हैं। ये परिवर्तन या तो मूल शब्द में जुड़नेवाले प्रत्ययों के कारण या संधि के कारण होते हैं। द्वित्व, संप्रसारण, संधि, स्वर, आगम, लोप, दीर्घ आदि के विधायक सूत्र छठे अध्याय में आए हैं। छठे अध्याय के चौथे पद से सातवें अध्याय के अंत तक अंगाधिकार नामक एक विशिष्ट प्रकरण है जिसमें उन परिवर्तनों का वर्णन है जो प्रत्यय के कारण मूल शब्दों में या मूल शब्द के कारण प्रत्यय में होते हैं। ये परिवर्तन भी दीर्घ, ह्रस्व, लोप, आगम, आदेश, गुण, वृद्धि आदि के विधान के रूप में ही देखे जाते हैं। अष्टम अध्याय में, वाक्यगत शब्दों के द्वित्वविधान, प्लुतविधान एवं षत्व और णत्वविधान का विशेषतः उपदेश है।^[4,5,6]

अष्टाध्यायी के अतिरिक्त उसी से संबंधित गणपाठ और धातुपाठ नामक दो प्रकरण भी निश्चित रूप से पाणिनि निर्मित थे। उनकी परंपरा आज तक अक्षुण्ण चली आती है, यद्यपि गणपाठ में कुछ नए शब्द भी पुरानी सूचियों में कालान्तर में जोड़ दिए गए हैं। वर्तमान उणादि सूत्रों के पाणिनिकृत होने में संदेह है और उन्हें अष्टाध्यायी के गणपाठ के समान अभिन्न अंग नहीं माना जा सकता। वर्तमान उणादि सूत्र शाकटायन-व्याकरण के ज्ञात हाते हैं।

परिचय

पाणिनि ने संस्कृत भाषा के तत्कालीन स्वरूप को परिष्कृत एवं नियमित करने के उद्देश्य से भाषा के विभिन्न अवयवों एवं घटकों यथा ध्वनि-विभाग (अक्षरसमाम्नाय), नाम (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण), पद, क्रिया, वाक्य, लिंग इत्यादि तथा उनके अन्तर्सम्बन्धों का समावेश अष्टाध्यायी के 32 पदों में, जो आठ अध्यायों में समान रूप से विभक्त हैं, किया है।

व्याकरण के इस महनीय ग्रन्थ में पाणिनि ने विभक्ति-प्रधान संस्कृत भाषा के विशाल कलेवर का समग्र एवं सम्पूर्ण विवेचन लगभग 4000 सूत्रों में किया है, जो आठ अध्यायों में संख्या की दृष्टि से असमान रूप से विभाजित हैं। तत्कालीन समाज में लेखन सामग्री की दुष्प्राप्यता को ध्यान में रखकर पाणिनि ने व्याकरण को स्मृतिगम्य बनाने के लिए सूत्र शैली की सहायता ली है। पुनः, विवेचन को अतिशय संक्षिप्त बनाने हेतु पाणिनि ने अपने पूर्ववर्ती वैयाकरणों से प्राप्त उपकरणों के साथ-साथ स्वयं भी अनेक उपकरणों का प्रयोग किया है जिनमें शिवसूत्र या माहेश्वर सूत्र सबसे महत्वपूर्ण हैं। प्रसिद्ध है कि महर्षि पाणिनि ने इन सूत्रों को देवाधिदेव शिव से प्राप्त किया था। [7,8,9]

नृत्तावसाने नटराजराजो ननाद ढक्कां नवपंचवारम्।

उद्धर्तुकामो सनकादिसिद्धादिनेतद्विमर्शो शिवसूत्रजालम्॥

पाणिनि ने संस्कृत भाषा के सभी शब्दों के निर्वचन के लिए करीब 4000 सूत्रों की रचना की जो अष्टाध्यायी के आठ अध्यायों में वैज्ञानिक ढंग से संगृहीत हैं। ये सूत्र वास्तव में गणित के सूत्रों की भाँति हैं। जिस तरह से जटिल एवं विस्तृत गणितीय धारणाओं अथवा सिद्धान्तों को सूत्रों (Formula/formulae) द्वारा सरलता से व्यक्त किया जाता है, उसी तरह पाणिनि ने सूत्रों द्वारा अत्यन्त संक्षेप में ही व्याकरण के जटिल नियमों को स्पष्ट कर दिया है। भाषा के समस्त पहलुओं के विवेचन हेतु ही उन्हें 4000 सूत्रों की रचना करनी पड़ी।

पाणिनि ने अष्टाध्यायी में प्रकरणों तथा तद्सम्बन्धित सूत्रों का विभाजन वैज्ञानिक रीति से किया है। पाणिनि ने अष्टाध्यायी को दो भागों में बाँटा है: प्रथम अध्याय से लेकर आठवें अध्याय के प्रथम पद तक को सपाद सप्ताध्यायी एवं शेष तीन पदों को त्रिपादी कहा जाता है। पाणिनि ने पूर्वत्रासिद्धम् (8-2-1) सूत्र बनाकर निर्देश दिया है कि सपाद सप्ताध्यायी में विवेचित नियमों (सूत्रों) की तुलना में त्रिपादी में वर्णित नियम असिद्ध हैं। अर्थात्, यदि दोनों भागों में वर्णित नियमों के मध्य यदि कभी विरोध हो जाए तो पूर्व भाग का नियम ही मान्य होगा। इसी तरह, सपादसप्ताध्यायी के अन्तर्गत आने वाले सूत्रों (नियमों) में भी विरोध दृष्टिगोचर होने पर क्रमानुसार परवर्ती (बाद में आने वाले) सूत्र का प्राधान्य रहेगा – विप्रतिषेधे परं कार्यम्। इन सिद्धान्तों को स्थापित करने के बाद, पाणिनि ने सर्वप्रथम संज्ञा पदों को परिभाषित किया है और बाद में उन संज्ञा पदों पर आधारित विषय का विवेचन।

संक्षिप्तता बनाए रखने के लिए पाणिनि ने अनेक उपाय किए हैं। इसमें सबसे महत्वपूर्ण है – विशिष्ट संज्ञाओं (Technical Terms) का निर्माण। व्याकरण के नियमों को बताने में भाषा के जिन शब्दों / अक्षरों समूहों की बारम्बार आवश्यकता पड़ती थी, उन्हें पाणिनि ने एकत्र कर विभिन्न विशिष्ट नाम दे दिया जो संज्ञाओं के रूप में अष्टाध्यायी में आवश्यकतानुसार विभिन्न प्रसंगों में प्रयुक्त किए गए हैं। नियमों को बताने के पहले ही पाणिनि वैसी संज्ञाओं को परिभाषित कर देते हैं, यथा – माहेश्वर सूत्र – 'प्रत्याहार, इत्, टि, नदी, घु, पद, धातु, प्रत्यय, अंग, निष्ठा इत्यादि। इनमें से कुछ को पाणिनि ने अपने पूर्ववर्ती वैयाकरणों से उधार लिया है। लेकिन अधिकांश स्वयं उनके द्वारा बनाए गए हैं। इन संज्ञाओं का विवरण आगे दिया गया है।

व्याकरण के कुछ अवयवों यथा धातु, प्रत्यय, उपसर्ग के विवेचन में, पाणिनि को अनेक नियमों (सूत्र) की आवश्यकता पड़ी। ऐसे नियमों के निर्माण के पहले, प्रारंभ में ही पाणिनि उन सम्बन्धित अवयवों का उल्लेख कर बता देते हैं कि आगे एक निश्चित सूत्र तक इन अवयवों का अधिकार रहेगा। इन अवयवों को वे पूर्व में ही संज्ञा रूप में परिभाषित कर चुके हैं। दूसरे शब्दों में पाणिनि प्रकरण विशेष का निर्वचन उस प्रकरण की मूलभूत संज्ञा – यथा धातु, प्रत्यय इत्यादि – के अधिकार (Coverage) में करते हैं जिससे उन्हें प्रत्येक सूत्र में सम्बन्धित संज्ञा को बार-बार दुहराना नहीं पड़ता है। संक्षिप्तता लाने में यह उपकरण बहुत सहायक है। [10,11,12]

अनुवृत्ति : सूत्र-शैली में लिखे गए ग्रन्थों की एक महत्वपूर्ण विशेषता है, 'अनुवृत्ति'। प्रायः एक उपविषय से सम्बन्धित सभी सूत्रों को एकत्र लिखा जाता है। दोहराव न हो, इसके लिए सभी सर्वनिष्ठ (कॉमन) शब्दों को सावधानीपूर्वक निकाल लिया जाता था और उनको सही जगह पर सही क्रम में रखा जाता था। अनुवृत्ति के अनुसार, किसी सूत्र में कही गयी बात आगे आने वाले एक या अधिक सूत्रों पर भी लागू हो सकती है। एक उदाहरण देखिए। अष्टाध्यायी का सूत्र (१-१-९) " तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम् " है। इसके बाद सूत्र (१-१-१०) "नाज्झलौ (= न अच्-हलौ)" है। जब हम (१-१-१०) नाज्झलौ (न अच्-हलौ) का अर्थ निकालते हैं तो यह ध्यान में रखना होगा कि इसका अकेले मतलब न निकाला जाय बल्कि इसका पूरा मतलब यह है कि "इसके पूर्व सूत्र में कही गयी 'सवर्ण' से सम्बन्धित बात अच्-हलौ (अच् और हल) पर लागू नहीं (न) होती है।" अर्थात्, सूत्र (१-१-१०) को केवल "नाज्झलौ" न पढ़ा जाय बल्कि "अच्-हलौ सवर्णो न" पढ़ा जाय।

शब्दों/पदों के निर्वचन के लिए, प्रकृति के आधार पर पाणिनि ने छः प्रकार के सूत्रों की रचना की है:

संज्ञा च परिभाषा च विधिर्नियम एव च।

अतिदेशोऽधिकारश्च षड्विधम् सूत्रं मतम् ॥

- संज्ञा सूत्र :

नामकरणं संज्ञा - तकनीकी शब्दों का नामकरण।

- परिभाषा सूत्र :

अनियमे नियमकारिणी परिभाषा।

- विधि सूत्र :

विषय का विधान।

- नियम सूत्र :

बहुत्र प्राप्तो संकोचनं हेतु।

- अतिदेश सूत्र :

जो अपने गुणधर्म को दूसरे सूत्रों पर लागू करते हैं।

- अधिकार सूत्र :

एकत्र उपात्तस्य अन्यत्र व्यापारः अधिकारः।

पाणिनीय व्याकरण के चार भाग

- अष्टाध्यायी - इसमें व्याकरण के लगभग ४००० सूत्र हैं।
- शिवसूत्र या माहेश्वर सूत्र - यह प्रत्याहार बनाने में सहायक होता है। प्रत्याहार के प्रयोग से व्याकरण के नियम संक्षिप्त रूप में पूरी स्पष्टता से कहे गये हैं।
- धातुपाठ - इस भाग में लगभग २००० धातुओं (क्रिया-मूलों) की सूची दी गयी है। इन धातुओं को विभिन्न वर्गों में रखा गया है।
- गणपाठ - यह २६१ गणों में पदों का संग्रह है।

पाणिनीय व्याकरण के अध्ययन के लिये आवश्यक बातें

प्रत्याहार, इत्संज्ञक, अधिकार, अनुवृत्ति, अपकर्ष, सन्धिविषयक शब्द (एकादेश, पररूप, पूर्वरूप, प्रकृतिभाव आदि), कुछ ज्ञातव्य संज्ञाएँ - (अडग, प्रतिपदिक, पद, भ संज्ञा, विभाषा, उपधा, टी, संयोग, संप्रसारण, गुण, वृद्धि, लोप, आदेश, आगम), शब्द-सिद्धि में सहायक कुछ अन्य उपाय।

पाणिनीय व्याकरण की प्रमुख विशेषताएँ

सम्पूर्णता

पाणिनि का व्याकरण संस्कृत भाषा का अत्यन्त सूक्ष्म विश्लेषण करता है। यह उस समय की बोलचाल की मानक भाषा का तो वर्णन करता ही है, इसके साथ ही वैदिक संस्कृत और संस्कृत के क्षेत्रीय प्रयोगों का भी वर्णन करता है। यहाँ तक कि पाणिनि ने भाषा के सामाजिक-भाषिक (sociolinguistic) प्रयोग पर भी प्रकाश डाला है।

संक्षिप्तता

पाणिनि का व्याकरण सम्पूर्ण होने के साथ ही इतना छोटा है कि लोग इसे याद करते आये हैं।

प्रयोग-सरलता

सामान्य

यद्यपि पाणिनि ने अपना व्याकरण संस्कृत के लिये रचा, किन्तु इसकी युक्तियाँ और उपकरण सभी भाषाओं के व्याकरण के विश्लेषण में प्रयुक्त की जा सकती हैं।

अन्य विशेषताएँ

- वाक्य को भाषा की मूल इकाई मानना,
- ध्वनि-उत्पादन-प्रक्रिया का वर्णन एवं ध्वनियों का वर्गीकरण,
- सुबन्त एवं तिङन्त के रूप में सरल और सटीक पद-विभाग,
- व्युत्पत्ति - प्रकृति और प्रत्यय के आधार पर शब्दों का विवेचन।

अष्टाध्यायी में वैदिक संस्कृत और पाणिनि की समकालीन शिष्ट भाषा में प्रयुक्त संस्कृत का सर्वांगपूर्ण विचार किया गया है। वैदिक भाषा का व्याकरण अपेक्षाकृत और भी परिपूर्ण हो सकता था। पाणिनि ने अपनी समकालीन संस्कृत भाषा का बहुत अच्छा सर्वेक्षण किया था। इनके शब्दसंग्रह में तीन प्रकार की विशेष सूचियाँ आई हैं :

1. जनपद और ग्रामों के नाम,
2. गोत्रों के नाम,
3. वैदिक शाखाओं और चरणों के नाम।

इतिहास की दृष्टि से और भी अनेक प्रकार की सांस्कृतिक सामग्री, शब्दों और संस्थाओं का सन्निवेश सूत्रों में हो गया है।

अष्टाध्यायी के बाद[13,14,15]

अष्टाध्यायी के साथ आरंभ से ही अर्थों की व्याख्यापूरक कोई वृत्ति भी थी जिसके कारण अष्टाध्यायी का एक नाम, जैसा पतंजलि ने लिखा है, वृत्तिसूत्र भी था। और भी, माथुरीवृत्ति, पुण्यवृत्ति आदि वृत्तियाँ थीं जिनकी परंपरा में वर्तमान काशिकावृत्ति है। अष्टाध्यायी की रचना के लगभग दो शताब्दी के भीतर कात्यायन ने सूत्रों की बहुमुखी समीक्षा करते हुए लगभग चार सहस्र वार्तिकों की रचना की जो सूत्रशैली में ही हैं। वार्तिकसूत्र और कुछ वृत्तिसूत्रों को लेकर पतंजलि ने महाभाष्य का निर्माण किया जो पाणिनीय सूत्रों पर अर्थ, उदाहरण और प्रक्रिया की दृष्टि से सर्वोपरि ग्रंथ है। "अथ शब्दानुशासनम्"- यह महाभाष्य का प्रथम वाक्य है। पाणिनि, कात्यायन और पतंजलि - ये तीन व्याकरणशास्त्र के प्रमुख आचार्य हैं जिन्हें 'मुनित्रय' कहा जाता है। पाणिनि के सूत्रों के आधार पर भट्टोजिदीक्षित ने सिद्धान्तकौमुदी की रचना की, और उनके शिष्य वरदराज ने सिद्धान्तकौमुदी के आधार पर लघुसिद्धान्तकौमुदी की रचना की।

विचार-विमर्श

अष्टाध्यायी एक व्याकरण है जो प्रारंभिक इंडो-आर्यन भाषा के एक रूप का वर्णन करता है : संस्कृत ।

संस्कृत भाषाविज्ञानी और विद्वान पाणिनि द्वारा लिखित और लगभग 500 ईसा पूर्व की, यह उनके समय में वर्तमान भाषा का वर्णन करती है, विशेष रूप से मॉडल वक्ताओं के एक अभिजात वर्ग की बोली और रजिस्टर, जिसे पाणिनि ने स्वयं शिष्टा के रूप में संदर्भित किया है । यह कार्य भाषा के पुराने वैदिक रूप की कुछ विशिष्ट विशेषताओं के साथ-साथ लेखक के समय में मौजूद कुछ द्विधात्मक विशेषताओं का भी वर्णन करता है।

अष्टाध्यायी भाषा का वर्णन करने के लिए एक व्युत्पन्न प्रणाली का उपयोग करती है, जहां वास्तविक भाषण कुछ शर्तों के तहत आधारों में जोड़े गए प्रत्ययों के माध्यम से गठित अमूर्त कथनों से प्राप्त होता है।

अष्टाध्यायी को तीन सहायक ग्रंथों द्वारा पूरक किया गया है: अक्षरसमाम्नाय , धातुपाठ ^[4] और गणपाठ ^[16,17,18]

पृष्ठभूमि

व्याकरणिक परंपरा

1000 ईसा पूर्व तक, प्रोटो-इंडो-आर्यन भाषा के सबसे पुराने प्रमाणित रूप में रचित भजनों के एक बड़े समूह को ऋग्वेद में समेकित किया गया था , जिसने वैदिक धर्म का विहित आधार बनाया, जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी पूरी तरह से मौखिक रूप से प्रसारित होता था।

निम्नलिखित शताब्दियों के दौरान, जैसे-जैसे लोकप्रिय भाषण विकसित हुआ, वैदिक धर्म के संरक्षकों के बीच चिंता बढ़ गई कि भजनों को 'भ्रष्टाचार' के बिना प्रसारित किया जाए, जिससे भाषाई विश्लेषण के अध्ययन से जुड़ी एक सशक्त, परिष्कृत व्याकरणिक परंपरा का उदय हुआ। , विशेष रूप से व्याकरण के साथ-साथ ध्वन्यात्मकता में। सदियों से चले आ रहे इस प्रयास का चरम बिंदु पाणिनि की अष्टाध्यायी थी , जिसने उनसे पहले के सभी को पीछे छोड़ दिया। ^{[3] [4] [5]}

हालांकि पहला नहीं, अष्टाध्यायी सबसे पुराना भाषाई और व्याकरण पाठ है, और सबसे पुराने संस्कृत ग्रंथों में से एक है, जो अपनी संपूर्णता में जीवित है। पाणिनि पुराने ग्रंथों जैसे उनादिसूत्र , धातुपाठ और गणपाठ को संदर्भित करता है , लेकिन इनमें से कुछ केवल आंशिक रूप से ही बचे हैं। ^[6]

व्यवस्था

अष्टाध्यायी में आठ अध्यायों में 3,959 सूत्र ^[7] हैं, जिनमें से प्रत्येक को चार खंडों या पादों में विभाजित किया गया है । सूत्र विभिन्न प्रकार के होते हैं, जिनमें विधिसूत्र - परिचालन नियम मुख्य हैं। अन्य, सहायक सूत्र हैं: ^[7]

- परिभाषा - मेटारूल्स
- अधिकार - शीर्ष
- अतिदेशसूत्र - विस्तार नियम
- नियमसूत्र - प्रतिबंधात्मक नियम
- प्रतिष्ठा- एवं निषेधसूत्र - निषेध नियम

संबंधित फ़्रील्ड

अष्टाध्यायी व्याकरण की नींव है , जो वैदिक सहायक क्षेत्रों (वेदांगों) में से एक है, ^[8] और निरुक्त , निघंत्स और शिक्षा जैसे अन्य क्षेत्रों का पूरक है । ^[9] पूर्णता का त्याग किए बिना बेहद कॉम्पैक्ट माना जाने वाला, यह बाद के विशेषज्ञ तकनीकी ग्रंथों या सूत्रों के लिए मॉडल बन जाएगा । ^[10]

विधि

पाठ इनपुट के रूप में शाब्दिक सूचियों (धातुपाठ , गणपति) से सामग्री लेता है और अच्छी तरह से गठित शब्दों की पीढ़ी के लिए उन पर लागू होने वाले एल्गोरिदम का वर्णन करता है। यह अत्यधिक व्यवस्थित और तकनीकी है। इसके दृष्टिकोण में स्वनिम , रूपिम और जड़ की अवधारणाएँ अंतर्निहित हैं । ^[11] संक्षिप्तता पर उनके व्याकरण के फोकस का एक परिणाम इसकी अत्यधिक अनपेक्षित संरचना है, जो " बैकस-नौर फॉर्म " जैसे आधुनिक नोटेशन की याद दिलाती है। उनके परिष्कृत तार्किक नियम और तकनीक प्राचीन और आधुनिक भाषा विज्ञान में व्यापक रूप से प्रभावशाली रहे हैं। ^[19,20,21]

पाणिनि एक तकनीकी धातुभाषा का उपयोग करता है जिसमें वाक्यविन्यास, आकृति विज्ञान और शब्दकोष शामिल होता है। इस धातुभाषा को मेटा-नियमों की एक श्रृंखला के अनुसार व्यवस्थित किया गया है, जिनमें से कुछ स्पष्ट रूप से बताए गए हैं जबकि अन्य का अनुमान लगाया जा सकता है।^{[12] [बी]}

टिप्पणी परंपरा

अष्टाध्यायी, उस युग में रचित थी जब मौखिक रचना और प्रसारण आदर्श था, उस मौखिक परंपरा में दृढ़ता से अंतर्निहित है। कहा जाता है कि व्यापक प्रसार सुनिश्चित करने के लिए, पाणिनि ने स्पष्टता के बजाय संक्षिप्तता को प्राथमिकता दी थी^[14] - इसे दो घंटों में शुरू से अंत तक पढ़ा जा सकता है। इससे सदियों से उनके काम की बड़ी संख्या में टिप्पणियाँ

इन भाष्यों में सबसे प्रसिद्ध और सबसे प्राचीन भाष्य पतंजलि का महाभाष्य^{[सी] [16]} है।^{[17] [18] [डी] [ई] [एफ]} पतंजलि के बाद व्याकरण पर गैर-हिंदू ग्रंथ और परंपराएं उभरीं, जिनमें से कुछ में जैन धर्म के जैनैन्द्र का संस्कृत व्याकरण पाठ और बौद्ध धर्म के चंद्र विद्यालय शामिल हैं।

आलोचनात्मक प्रतिक्रियाएँ [22,23,24]

अष्टाध्यायी में, भाषा का इस तरह से अवलोकन किया गया है कि ग्रीक या लैटिन व्याकरणविदों के बीच इसकी कोई समानता नहीं है। रेनौ और फ़िलिओज़ैट के अनुसार, पाणिनि का व्याकरण भाषाई अभिव्यक्ति और एक क्लासिक को परिभाषित करता है जो संस्कृत भाषा के लिए मानक निर्धारित करता है।^[20]

परिणाम

पहले दो सूत्र इस प्रकार हैं:

1.1.1 वृद्धिर अदैच^[i]

1.1.2 अदें गुणः^[iii]

इन सूत्रों में, जिन अक्षरों को यहाँ बड़े अक्षरों में रखा गया है वे वास्तव में विशेष मेटा-भाषाई प्रतीक हैं; उन्हें आईटी^[iii] मार्कर या, कात्यायन और पतंजलि जैसे बाद के लेखकों द्वारा, अनुबन्ध कहा जाता है (नीचे देखें)। सी और N क्रमशः शिव सूत्र 4 (" ऐ, औ, सी ") और 3 (" ई, ओ, N ") को संदर्भित करते हैं, जो प्रत्याहार के "व्यापक पदनाम" एआईसी, ईN के रूप में जाने जाते हैं। वे क्रमशः स्वरों की सूची { ai, au } और { e, o } दर्शाते हैं। दोनों सूत्रों में दिखाई देने वाला टी^[iv] (अपने भिन्न रूप /d/ में) भी एक आईटी मार्कर है: सूत्र 1.1.70 इसे इस रूप में परिभाषित करता है कि पूर्ववर्ती स्वर एक सूची का प्रतिनिधित्व नहीं करता है, बल्कि एक एकल स्वर है, जो सभी सुप्रा को समाहित करता है। -खंडीय विशेषताएं जैसे उच्चारण और नासिका। आगे के उदाहरण के लिए, āT^[v] और aT^[vi] क्रमशः ā^[vii] और a^[viii] का प्रतिनिधित्व करते हैं।

जब कोई सूत्र तकनीकी शब्द को परिभाषित करता है, तो परिभाषित शब्द अंत में आता है, इसलिए पहला सूत्र उचित रूप से वृद्धिर अदैच के बजाय अदैज वृद्धिर होना चाहिए था। हालाँकि काम की शुरुआत में ही शुभकामना शब्द देने के आदेशों को उलट दिया गया है; इसके गैर-तकनीकी उपयोग में वृद्धिर का अर्थ 'समृद्धि' होता है।

इस प्रकार दोनों सूत्रों में स्वरों की एक सूची शामिल है, जिसके बाद एक तकनीकी शब्द आता है; उपरोक्त दो सूत्रों की अंतिम व्याख्या इस प्रकार है:

1.1.1: { आ, ऐ, औ } को वृद्धि कहा जाता है।

1.1.2: { ए, ई, ओ } को गुण कहा जाता है।

इस बिंदु पर, कोई देख सकता है कि वे शब्दावली की परिभाषाएँ हैं: गुण और वृद्धि क्रमशः पूर्ण और लंबे इंडो-यूरोपीय एब्लाउट ग्रेड के लिए शब्द हैं।

आईटी मार्करों की सूची

इसे या अनुबन्ध कहे जाने वाले मार्करों को पी. 1.3.2 से पी. 1.3.8 तक परिभाषित किया गया है। ये परिभाषाएँ केवल व्याकरण या उसके सहायक ग्रंथों जैसे धातुपाठ में पढ़ाई जाने वाली वस्तुओं को संदर्भित करती हैं; इस तथ्य को पृष्ठ 1.3.2 में उपदेश शब्द द्वारा स्पष्ट किया गया है, जिसे बाद में अनुवृत्ति, एलिप्सिस द्वारा निम्नलिखित छह नियमों में जारी रखा गया है। चूँकि ये अनुबन्ध धातुभाषी चिह्नक हैं और अंतिम व्युत्पन्न रूप, पद (शब्द) में उच्चारित नहीं होते हैं, इन्हें पी. 1.3.9 तस्य लोपः द्वारा समाप्त

किया जाता है - 'उसका क्षरण है (अर्थात् पूर्ववर्ती वस्तुओं में से कोई भी जिसे परिभाषित किया गया है) इसके रूप में)'। तदनुसार, पाणिनि अनुबन्ध को इस प्रकार परिभाषित करते हैं:[25,26,27]

1. अनुनासिक स्वर, जैसे भन्जो । सी एफ पी. 1.3.2.
2. एक अंतिम व्यंजन (एचएएल)। सी एफ पी. 1.3.3.
2. (ए) दंत को छोड़कर, मौखिक या नाममात्र अंत में एम और एस । सी एफ पी. 1.3.4.
3. प्रारंभिक ñi tu du . सी एफ पी 1.3.5
4. प्रत्यय का प्रारंभिक ऽ (प्रत्यय)। सी एफ पी. 1.3.6.
5. प्रत्यय के प्रारंभिक तालु और मस्तिष्क। सी एफ पी. 1.3.7
6. प्रारंभिक एल , श , और वेलर्स लेकिन तद्धिता 'माध्यमिक' प्रत्यय में नहीं। सी एफ पी. 1.3.8.

जिन तत्वों में यह शामिल है उनके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं:

- suP नाममात्र प्रत्यय
- बैठना
 - Śi मजबूत केस अंत
 - Ślू एलिशन
 - ŚaP सक्रिय मार्कर
- गड्ढा
 - luP elision
 - आप आ -तने
 - सी.ए.पी
 - नल
 - Dap
 - एलवाईएपी (7.1.37)
- एल यह
- कश्मीर आईटी
 - Ktvā
 - लुक एलीशन
- साएन वांछनीय
- सी यह
- एम-आईटी
- N-आईटी
 - और कारक
 - Nii मैं-तने
 - एनआईपी
 - निन
 - ठीक है
 - तिन मौखिक प्रत्यय
 - ल्यूं एओरिस्ट
 - मैं पूर्वसूचक
- बैठना
- मौखिक उपजी का जीएचयू वर्ग (1.1.20)
- जीएचआई (1.4.7)

सहायक ग्रंथ

पाणिनि की अष्टाध्यायी में तीन संबद्ध ग्रंथ हैं।

- शिव सूत्र स्वरो की एक संक्षिप्त लेकिन उच्च संगठित सूची है।
- धातुपथ वर्तमान वर्ग द्वारा क्रमबद्ध मौखिक जड़ों की एक शाब्दिक सूची है।
- गणपथ सामान्य गुणों द्वारा समूहीकृत नाममात्र तनों की एक शाब्दिक सूची है।

शिव सूत्र

शिव सूत्र अष्टाध्यायी से पहले की चौदह प्रारंभिक पंक्तियों में एक ध्वन्यात्मक संकेतन प्रणाली का वर्णन करते हैं। सांकेतिक प्रणाली स्वरो के विभिन्न समूहों का परिचय देती है जो संस्कृत की आकृति विज्ञान में विशेष भूमिका निभाते हैं, और पूरे पाठ में संदर्भित होते हैं। प्रत्येक समूह, जिसे प्रत्याहार कहा जाता है, एक डमी ध्वनि के साथ समाप्त होता है जिसे अनुबंध (तथाकथित आईटी सूचकांक) कहा जाता है, जो सूची के लिए एक प्रतीकात्मक संदर्भ के रूप में कार्य करता है। मुख्य पाठ के भीतर, अनुबंधों के माध्यम से संदर्भित ये समूह विभिन्न व्याकरणिक कार्यों से संबंधित हैं।

धातुपाठ

धातुपाठ शास्त्रीय संस्कृत की संस्कृत मौखिक जड़ों (धातु) का एक शब्दकोष है, जो उनके गुणों और अर्थों को दर्शाता है। धातुपाठ में लगभग 2300 जड़ें हैं। इनमें से 522 जड़ें अक्सर शास्त्रीय संस्कृत में उपयोग की जाती हैं। [28,29]

धातुपाठ को संस्कृत के दस वर्तमान वर्गों द्वारा व्यवस्थित किया जाता है, अर्थात जड़ों को वर्तमान काल में उनके तने के रूप के आधार पर समूहीकृत किया जाता है।

संस्कृत की वर्तमान दस श्रेणियाँ हैं:

1. भू-ादयः (मूल-पूर्ण ग्रेड+एकविषयगत प्रस्तुत) > संधि के साथ:भावादय
2. अद-अदायः (मूल प्रस्तुत)
3. जुहोति-ादयः (पुनः प्रतिरूपित उपहार) > संधि के साथ:जुहोति-ादायः
4. दिव्यदयाः (याविषयगत प्रस्तुतियाँ)
5. सु-आदयः (नुप्रस्तुत) > संधि के साथ:स्वदयाः
6. तुदादयः (मूल-शून्य ग्रेड+एविषयगत प्रस्तुत)
7. रुध-ादायः (एन-इन्फिक्स प्रस्तुत करता है)
8. तन-ाद्यः (उपहारनहीं)
9. क्रियादयः (निप्रस्तुत करता है) > संधि के साथ:क्रियादयः
10. कर्कादयः (अयाप्रस्तुत करता है: कारक, संप्रदाय आदि)

कक्षा के नाम के रूप में उपयोग की जाने वाली सभी क्रिया जड़ें (कक्षा तीन में: हू धातु का तीसरा व्यक्ति एकवचन वर्तमान काल) को यहां उनके संधि-मुक्त रूप में आदि (आदि) शब्द के साथ उद्धृत किया गया है, या: "शुरुआत" ", जोड़ा गया, जिससे " एक्स इत्यादि" के अर्थ के साथ एक बहुव्रीही यौगिक बनता है। (शाब्दिक रूप से: "वह [= समूह/वर्ग] जिसकी शुरुआत X से होती है "; या: "जिनके पास...", यदि आदि का बहुवचन यहाँ ऊपर के रूप में उपयोग किया जाता है: अदायः)। जो नाम संधि से प्रभावित हैं उन्हें दोहराया गया।

कक्षा 8 की क्रियाओं की छोटी संख्या कक्षा 5 की जड़ों से प्राप्त एक द्वितीयक समूह है, और कक्षा 10 एक विशेष मामला है, जिसमें कोई भी क्रिया कक्षा 10 प्रस्तुत कर सकती है, फिर कारक अर्थ ग्रहण कर सकती है। विशेष रूप से कक्षा 10 से संबंधित के रूप में सूचीबद्ध जड़ें वे हैं जिनके लिए कोई अन्य रूप उपयोग से बाहर हो गया है (कारक अभिसाक्षी, इसलिए बोलने के लिए, और भाजक)।

गणपठ

गणपाठ अष्टाध्यायी द्वारा प्रयुक्त आदिम नाममात्र तनों (जड़ों) के समूहों की एक सूची है।

समूहों के उदाहरणों में शामिल हैं:

1. मौखिक उपसर्गों की सूची (उपसर्ग)।
2. सर्वनामों की सूची ("सर्वनाम" एक सटीक अनुवाद नहीं है, लेकिन आमतौर पर इसका उपयोग किया जाता है क्योंकि सूची में 'वह', 'वह', 'यह', लेकिन 'सभी' (जिससे समूह का नाम मिलता है), 'वह' भी शामिल है।)।

टिप्पणी

पाणिनि के बाद, अष्टाध्यायी पर पतंजलि का महाभाष्य संस्कृत व्याकरण में तीन सबसे प्रसिद्ध कार्यों में से एक है। पतंजलि के साथ ही भारतीय भाषा विज्ञान अपने निश्चित स्वरूप तक पहुंचा। इस प्रकार स्थापित प्रणाली शिक्षा (ध्वनिविज्ञान , उच्चारण सहित) और व्याकरण (आकृति विज्ञान) के संबंध में अत्यंत विस्तृत है। वाक्य-विन्यास को शायद ही छुआ गया है, लेकिन निरुक्त (व्युत्पत्ति विज्ञान) पर चर्चा की गई है, और ये व्युत्पत्तियाँ स्वाभाविक रूप से अर्थ संबंधी व्याख्याओं की ओर ले जाती हैं। लोग उनके कार्य की व्याख्या पाणिनि की रक्षा के रूप में करते हैं, जिनके सूत्र अर्थपूर्ण ढंग से विस्तृत हैं। वह कात्यायन पर भी गंभीर हमला करता है। लेकिन पतंजलि का मुख्य योगदान उनके द्वारा प्रतिपादित व्याकरण के सिद्धांतों के उपचार में निहित है।

अन्य जानकारी

पाणिनि का कार्य प्राचीन भारत के बारे में सांस्कृतिक, धार्मिक और भौगोलिक जानकारी के महत्वपूर्ण स्रोतों में से एक रहा है, साथ ही उन्हें स्वयं व्याकरण और भाषा विज्ञान के हिंदू विद्वान के रूप में जाना जाता है।^[21]^[22]^[23] उदाहरण के लिए, उनका काम वासुदेव (4.3.98) शब्द को सम्मानजनक अर्थ में एक व्यक्तिवाचक संज्ञा के रूप में दर्शाता है, जिसका अर्थ समान रूप से एक दिव्य या एक सामान्य व्यक्ति हो सकता है। विद्वानों द्वारा इसकी व्याख्या भगवान वासुदेव (कृष्ण) के महत्व को प्रमाणित करने या इसके विपरीत के रूप में की गई है।^[24] धर्म की अवधारणा को उनके सूत्र 4.4.41 में प्रमाणित किया गया है, धर्म चरति या "वह धर्म (कर्तव्य, धार्मिकता) का पालन करता है" (सीएफ. तैत्तिरीय उपनिषद 1.11)।^[25]^[26] इस प्रकार पाणिनि के व्याकरण को बारीकी से पढ़ने से बहुत सी सामाजिक, भौगोलिक और ऐतिहासिक जानकारी का अनुमान लगाया गया है।^[27]

निष्कर्ष

पाणिनि को उनके पाठ अष्टाध्यायी के लिए जाना जाता है, जो संस्कृत व्याकरण पर एक सूत्र -शैली का ग्रंथ है, ^[11]^[8] 3,996 ^[17] "आठ अध्यायों" में भाषा विज्ञान, वाक्यविन्यास और शब्दार्थ पर छंद या नियम, जो व्याकरण शाखा का मूलभूत पाठ है। वेदांग, वैदिक काल के सहायक विद्वान अनुशासन।^[18]^[19]^[20] उनके सूक्ति पाठ ने कई भाष्यों (टिप्पणियों) को आकर्षित किया, जिनमें से पतंजलि का महाभाष्य सबसे प्रसिद्ध है।^[21] उनके विचारों ने बौद्ध धर्म जैसे अन्य भारतीय धर्मों के विद्वानों की टिप्पणियों को प्रभावित और आकर्षित किया।^[22]

पाणिनि का संज्ञा यौगिकों का विश्लेषण अभी भी भारतीय भाषाओं में यौगिकीकरण के आधुनिक भाषाई सिद्धांतों का आधार बनता है। पाणिनि के व्याकरण के व्यापक और वैज्ञानिक सिद्धांत को पारंपरिक रूप से शास्त्रीय संस्कृत की शुरुआत के रूप में लिया जाता है।^[23] उनके व्यवस्थित ग्रंथ ने संस्कृत को दो सहस्राब्दियों तक शिक्षा और साहित्य की प्रमुख भारतीय भाषा के रूप में प्रेरित किया और बनाया।

पाणिनि का रूपात्मक विश्लेषण का सिद्धांत 20वीं शताब्दी से पहले किसी भी समकक्ष पश्चिमी सिद्धांत से अधिक उन्नत था।^[24] उनका ग्रंथ सृजनात्मक और वर्णनात्मक है, धातुभाषा और मेटा -नियमों का उपयोग करता है, और इसकी तुलना ट्यूरिंग मशीन से की गई है जिसमें किसी भी कंप्यूटिंग डिवाइस की तार्किक संरचना को एक आदर्श गणितीय मॉडल का उपयोग करके इसकी अनिवार्यता तक कम कर दिया गया है।^[25]

दिनांक और संदर्भ

पाणिनि संभवतः महाजनपद युग के दौरान उत्तर पश्चिम भारतीय उपमहाद्वीप^[6] में प्राचीन गांधार में शालतुरा में रहते थे।^[7]^[4]

पाणिनि नाम एक संरक्षक शब्द है जिसका अर्थ है पाणिन का वंशज।^[27] पतंजलि के महाभाष्य के श्लोक 1.75.13 और 3.251.12 के अनुसार उनका पूरा नाम दक्षिणपुत्र पाणिनि था, पहले भाग से पता चलता है कि उनकी माता का नाम दाक्षी था।^[6]

डेटिंग

पाणिनि कब जीवित रहे, इसके बारे में कुछ निश्चित ज्ञात नहीं है, यहाँ तक कि वे किस शताब्दी में भी जीवित रहे। पाणिनि का समय सातवीं^[28] और चौथी शताब्दी ईसा पूर्व के बीच का बताया गया है।^{[29] [1] [2] [3] [4] [नोट 1]}

जॉर्ज कार्डोना (1997) ने पाणिनि-संबंधित अध्ययनों के अपने आधिकारिक सर्वेक्षण और समीक्षा में कहा है कि उपलब्ध साक्ष्य दृढ़ता से 400 और 350 ईसा पूर्व के बीच की डेटिंग का समर्थन करते हैं, जबकि पहले की डेटिंग व्याख्याओं पर निर्भर करती है और संभावित नहीं है।^[30]

मुद्राशास्त्रीय निष्कर्षों के आधार पर, वॉन हिनुबर (1989) और फ़ॉक (1993) ने पाणिनि को चौथी शताब्दी ईसा पूर्व के मध्य में रखा है।^{[1] [2] [3] [29]} पाणिनि का रूपया (ए 5.2.119, ए 5.2.120), ए. 5.4.43, ए 4.3.153,) कई सूत्रों में एक विशिष्ट सोने के सिक्के, निष्क का उल्लेख करता है,^[31] जिसे भारत में चौथी शताब्दी ईसा पूर्व में पेश किया गया था।^[3] हौबेन के अनुसार, "की तिथि" सी. इस प्रकार पाणिनि के लिए 350 ईसा पूर्व ठोस सबूतों पर आधारित है जिसका अब तक खंडन नहीं किया गया है। पाणिनि की तिथि 350 ईसा पूर्व या उसके बाद के दशकों में।^[29] ब्रॉखोस्ट के अनुसार,

...हिनुबर (1990:34-35) और फ़ॉक (1993:303-304) द्वारा किए गए कार्यों के लिए धन्यवाद, अब हम जानते हैं कि पाणिनि, पूरी संभावना में, अशोक के काल की तुलना में कहीं अधिक निकट रहते थे। अब तक सोचा गया था. फ़ॉक के तर्क के अनुसार, पाणिनी 350 ईसा पूर्व के बाद के दशक के दौरान रहे होंगे, यानी, मैसेडोनिया के अलेक्जेंडर के आक्रमण से ठीक पहले (या उसके समसामयिक रूप से?)^[2]

कार्डोना ने पाणिनि के कालनिर्धारण के लिए आंतरिक साक्ष्य के दो प्रमुख टुकड़ों का उल्लेख किया है।^{[32] 4.1.49} में यवननि शब्द की घटना, एक लेखन (लिपि) सीक्यू क्यूनिफॉर्म लेखन, या ग्रीक लेखन का जिक्र करते हुए, 326 ईसा पूर्व सिकंदर महान के भारतीय अभियान के बाद पाणिनि के लिए एक तारीख का सुझाव देती है। कार्डोना ने इस संभावना को खारिज कर दिया, यह तर्क देते हुए कि यवननी एक यवन महिला को भी संदर्भित कर सकती है; और यह कि सिकंदर की विजय से पहले भारतीयों का यूनानी दुनिया से संपर्क था।^{[33] [नोट 3]} पाणिनि के सूत्र 2.1.70 में कुमारश्रमण का उल्लेख है, जो श्रमण से लिया गया है, जो एक महिला त्यागी, सीक्यू "बौद्ध भिक्षुणियों" को संदर्भित करता है, जिसका अर्थ है कि पाणिनि को गौतम बुद्ध के बाद रखा जाना चाहिए। केबी पाठक (1930) ने तर्क दिया कि कुमारश्रमण एक जैन नन का भी उल्लेख कर सकते हैं, जिसका अर्थ है कि पाणिनि को बुद्ध के बाद रखा जाना जरूरी नहीं है।^[32]

यह निश्चित नहीं है कि पाणिनि ने अपने काम की रचना के लिए लेखन का उपयोग किया था, हालांकि यह आम तौर पर सहमत है कि वह लेखन के एक रूप के बारे में जानते थे, जो कि लिपि ("लिपि") और लिपिकारा ("लेखक") जैसे शब्दों के संदर्भ पर आधारित था। अष्टाध्यायी का खंड 3.2.^{[36] [37] [38]} वर्तमान उत्तर पश्चिम पाकिस्तान में लेखन की शुरूआत का काल निर्धारण, इसलिए पाणिनि के काल निर्धारण के बारे में अधिक जानकारी दे सकता है।^[नोट 4]

पाणिनि ने अपने पहले के कम से कम दस व्याकरणविदों और भाषाविदों का हवाला दिया है: एपिशाली, कश्यप, गार्ग्य, गालव, चक्रवर्त्मन, भारद्वाज, शाकटायन, शाकल्य, सेनका, स्फोटायन और यास्क।^[45] कमल के मिश्रा के अनुसार, पाणिनि ने यास्का के निरुक्त का संदर्भ दिया है,^[46] "जिसका लेखन चौथी शताब्दी ईसा पूर्व के मध्य का है"^[47]

बृहत्कथा और मंजुश्री-मूल-कल्प दोनों में पाणिनि को नंद राजा (चौथी ई.पू.) का समकालीन बताया गया है।^[48]

अन्य, भाषाई शैली के आधार पर, उनके कार्यों को छठी या पाँचवीं शताब्दी ईसा पूर्व का बताते हैं, जैसे:

- बोड के अनुसार, पाणिनि का व्याकरण शास्त्रीय संस्कृत को परिभाषित करता है, इसलिए पाणिनि को कालानुक्रमिक रूप से वैदिक काल के उत्तरार्ध में, सातवीं से पाँचवीं शताब्दी ईसा पूर्व में रखा गया है।^[26]
- एबी कीथ के अनुसार, संस्कृत पाठ जो पाणिनि द्वारा वर्णित भाषा से सबसे अधिक मेल खाता है, वह ऐतरेय ब्राह्मण (लगभग 8वीं - 6वीं ईसा पूर्व) है।^[49]
- शार्फ़ के अनुसार, "उपनिषदों और वैदिक सूत्रों में पाई गई वैदिक भाषा से उनकी निकटता 5वीं या शायद 6वीं ई.पू. का संकेत देती है"^[6]

पाणिनि के निजी जीवन के बारे में कुछ भी निश्चित नहीं पता है। वल्लभी के सिलादित्य VII के एक शिलालेख में, [कौन?] उसे सलातुरिया कहा जाता है, जिसका अर्थ है "सलातुरा का आदमी"। [उद्धरण वांछित] इसका मतलब है कि पाणिनि प्राचीन गांधार (वर्तमान उत्तर-पश्चिम पाकिस्तान) के सलातुरा में रहते थे, जो संभवतः लाहौर के पास था, जो सिंधु और काबुल नदियों के जंक्शन पर एक शहर था। [7] [50] [51] 7वीं शताब्दी के चीनी विद्वान जुआनज़ांग के संस्मरणों के अनुसार, सिंधु पर सुओलुओडुलुओ नामक एक शहर था जहां पाणिनि का जन्म हुआ था, और उन्होंने किंगमिंग-लुन (संस्कृत: व्याकरण) की रचना की थी। [50] [52] [53]

हार्टमूट शार्फ़ के अनुसार, पाणिनि अचमेनिद साम्राज्य की सीमाओं के करीब गांधार में रहते थे, और सिंधु घाटी की अचमेनिद विजय के बाद गांधार तब एक अचमेनियन क्षेत्र था। इसलिए, वह तकनीकी रूप से फ़ारसी विषय रहा होगा लेकिन उसके काम में फ़ारसी भाषा के बारे में कोई जागरूकता नहीं दिखती है। [6] [54] पैट्रिक ओलिवेल के अनुसार, पाणिनि के पाठ और अन्यत्र उनके संदर्भ से पता चलता है कि "वह स्पष्ट रूप से एक उत्तरवासी थे, शायद उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र से"। [55]

किंवदंतियाँ और बाद का स्वागत

पाणिनि का उल्लेख भारतीय दंतकथाओं और प्राचीन ग्रंथों में मिलता है। उदाहरण के लिए, पंचतंत्र में उल्लेख है कि पाणिनि को एक शेर ने मार डाला था।

अगस्त, 2004 में पाणिनी को पांच रुपये के भारतीय डाक टिकट पर चित्रित किया गया था। [59] [60] [61] [62]

अष्टाध्यायी

पाणिनी के कार्यों में सबसे महत्वपूर्ण, अष्टाध्यायी एक व्याकरण है जो अनिवार्य रूप से संस्कृत भाषा को परिभाषित करता है। अपने समय में विशिष्ट वक्ताओं की बोली और रजिस्टर पर आधारित, यह पाठ पुरानी वैदिक भाषा की कुछ विशेषताओं का भी वर्णन करता है।

अष्टाध्यायी भाषा के हर पहलू को नियंत्रित करने वाले बीजगणितीय नियमों वाला एक अनुदेशात्मक और उत्पादक व्याकरण है। यह तीन सहायक ग्रंथों द्वारा पूरक है: अक्षरसमाम्नाय, धातुपाठ [6] और गणपाठ। [63]

वैदिक भजनों की भाषा को "भ्रष्टाचार" से बचाने के सदियों पुराने प्रयास से आगे बढ़ते हुए, अष्टाध्यायी भाषा परिवर्तन को रोकने के लिए तैयार की गई एक सशक्त, परिष्कृत व्याकरणिक परंपरा का उच्च बिंदु है। अष्टाध्यायी की प्रधानता इस तथ्य से रेखांकित होती है कि इसने पहले आए सभी समान कार्यों को पीछे छोड़ दिया: हालांकि यह पहला नहीं है, यह अपनी संपूर्णता में जीवित सबसे पुराना ऐसा पाठ है।

अष्टाध्यायी में आठ अध्यायों में 3,959 सूत्र [64] हैं, जिनमें से प्रत्येक को चार खंडों या पादों में विभाजित किया गया है। पाठ इनपुट के रूप में शाब्दिक सूचियों (धातुपाठ, गणपति) से सामग्री लेता है और अच्छी तरह से गठित शब्दों की पीढ़ी के लिए उन पर लागू होने वाले एल्गोरिदम का वर्णन करता है। इसकी जटिलता इतनी है कि इसके नियमों और मेटारूल्स के सही अनुप्रयोग पर सदियों बाद भी काम किया जा रहा है।

अष्टाध्यायी, उस युग में रचित थी जब मौखिक रचना और प्रसारण आदर्श था, उस मौखिक परंपरा में दृढ़ता से अंतर्निहित है। कहा जाता है कि व्यापक प्रसार सुनिश्चित करने के लिए, पाणिनि ने स्पष्टता के बजाय संक्षिप्तता को प्राथमिकता दी थी [70] - इसे दो घंटों में शुरू से अंत तक पढ़ा जा सकता है। [30]

संदर्भ

1. "A reminder: Panini didn't destroy lingual diversities with his Sanskrit grammar, he unified them". मूल से 27 मई 2019 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 27 मई 2019.
2. कार्डोना, §1-3.
3. ^ मोनियर मोनियर-विलियम्स
4. ^ एबीऊपर जायें: बुरो, §2.1.
5. ^ कॉल्सन, पृ. xv.
6. ^ व्हिटनी, पृ. xii.
7. ^ कार्डोना, §4.
8. ^ कार्डोना (1997) §10.

9. ^ हेरोल्ड जी. कावर्ड 1990 , पीपी. 13-14, 1111
10. ^ जेम्स लोचटेफेल्ड (2002), द इलस्ट्रेटेड इनसाइक्लोपीडिया ऑफ हिंदूइज्म, वॉल्यूम में "व्याकरण"। 2: एनजेड, रोसेन पब्लिशिंग, आईएसबीएन 0-8239-2287-1 , पृष्ठ 476, 744-745, 769
11. ^ जोनार्डन गनेरी, संस्कृत दार्शनिक टिप्पणी (पीडीएफ) , 2020-11-27 को मूल से संग्रहीत (पीडीएफ) , 2021-03-19 को पुनः प्राप्त किया गया
12. ^ ब्लूमफ्रील्ड, एल., 1929, "लिबिच की समीक्षा, कोन्कोर्डान्ज़ पाणिनि-कंडा", भाषा 5, 267-276।
13. ^ अंगोट, मिशेल। एल'इंडे क्लासिक , पीपी.213-215। लेस बेल्स लेट्रेस, पेरिस, 2001। आईएसबीएन 2-251-41015-5
14. ^ 1909 के भारत के इंपीरियल गजेटियर में, इसे "एक ही समय में दुनिया का सबसे छोटा और पूर्णतम व्याकरण" के रूप में वर्णित करना अभी भी संभव था। संस्कृत साहित्य 2021-04-21 को वेबैक मशीन पर संग्रहीत , द इंपीरियल गजेटियर ऑफ इंडिया , खंड। 2 (1909), पृ. 263.
15. ^ व्हिटनी, पृ. तेरहवें
16. ^ कॉल्सन, पृष्ठ xvi.
17. ^ कार्डोना 1997 , पीपी 243-259।
18. ^ हेरोल्ड जी. कावर्ड 1990 , पृ. 16.
19. ^ हेरोल्ड जी. कावर्ड 1990 , पीपी. 16-17.
20. ^ टिबोर किस 2015 , पीपी 71-72।
21. ^ लुई रेनौ और जीन फ़िलियोज़ेट। एल'इंडे क्लासिक, मैनुअल डेस एट्यूड्स इंडिएन्स , खंड II पीपी.86-90, इकोले फ़्रैन्काइज़ डी'एक्सट्रीम-ओरिएंट , 1953, 2000 पुनर्मुद्रित। आईएसबीएन 2-85539-903-3 ।
22. ^ स्टीवन वीस्लर; स्लावोलजुब पी. मिलेकि (2000)। भाषा का सिद्धांत . एमआईटी प्रेस। पी। 44. आईएसबीएन 978-0-262-73125-6., उद्धरण: "प्रसिद्ध हिंदू व्याकरणविद् पाणिनि की भाषाई जांच हो सकती है..."
23. ^ मॉरिस हाले (1971)। रूसी का ध्वनि पैटर्न: एक भाषाई और ध्वनिक जांच । वाल्टर डी ग्रुइटर. पी। 88. आईएसबीएन 978-3-11-086945-3., उद्धरण: "हालाँकि, समस्या का सामना हिंदू व्याकरणविद् पाणिनि को करना पड़ा, जो स्पष्ट रूप से अपनी ध्वन्यात्मक वर्गीकरण योजना के व्याकरणिक निहितार्थों के प्रति सचेत थे।"
24. ^ जॉन बोमन (2005)। एशियाई इतिहास और संस्कृति का कोलंबिया कालक्रम । कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस. पीपी. 728 (पाणिनि, हिंदू व्याकरणविद्, 328)। आईएसबीएन 978-0-231-50004-3.
25. ^ आरजी भंडारकर (1910), पाणिनि चतुर्थ के वासुदेव, iii, 98 संग्रहीत 2022-02-10 वेबैक मशीन पर, द जर्नल ऑफ़ द रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ़ ग्रेट ब्रिटेन एंड आयरलैंड, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, (जनवरी, 1910), पृ. 168-170
26. ^ रमा नाथ शर्मा (1999)। पाणिनि की अष्टाध्यायी: अध्याय चार और पांच का अंग्रेजी अनुवाद । मुंशीराम मनोहरलाल. पी। 377. आईएसबीएन 978-81-215-0747-9.; संस्कृत: 4.4.41 धर्म चरति। , अष्टाध्यायी 4, विकिसोर्स
27. ^ पीटर शर्फ (2014)। रामोपाख्यान - महाभारत में राम की कहानी । रूटलेज। पी। 192. आईएसबीएन 978-1-136-84655-7.
28. ^ वासुदेवा एस. अग्रवाली (1963)। पाणिनि को भारत के नाम से जाना जाता है। अष्टाध्यायी में सांस्कृतिक सामग्री का अध्ययन। (1952 के लिए राधा कुमुद मुखर्जी एंडोमेंट व्याख्यान।) [एक प्लेट और फोटोडुप्लिकेट मानचित्रों के साथ।] वाराणसी। ओसीएलसी 504674962 ।
29. ^ "वैदिक पुस्तकों में राम नाथ शर्मा द्वारा पाणिनि की अष्टाध्यायी (6 खंड)" । www.vedicbooks.net । 2016-09-23 को मूल से संग्रहीत । 2016-09-22 को पुनःप्राप्त .
30. ^ "पैनीनिस ग्रैमैटिक, ओटो वॉन बोहटलिंगक, लीपज़िग 1887 - हीडलबर्ग यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी" । 2022-01-08 को पुनःप्राप्त .



INNO SPACE
SJIF Scientific Journal Impact Factor
Impact Factor: 8.423



ISSN INTERNATIONAL
STANDARD
SERIAL
NUMBER
INDIA



INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIVE RESEARCH

IN SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

9940 572 462 6381 907 438 ijirset@gmail.com



www.ijirset.com

Scan to save the contact details